



झारखण्ड में कृषि: विशेषता, समस्या एवं समाधान (1950–2000)

अमरेन्द्र कुमार आजाद, शोधार्थी, इतिहास विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE



Author

अमरेन्द्र कुमार आजाद, शोधार्थी
E-mail : amarendranityazad123@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 04/04/2026
Revised on : 05/06/2026
Accepted on : 14/06/2026
Overall Similarity : 00% on 06/06/2026



Plagiarism Checker X - Report

Originality Assessment

0%

Overall Similarity

Date: Jun 6, 2026 (07:18 AM)
Matches: 0 / 3284 words
Sources: 0

Remarks: No similarity found,
your document looks healthy.

Verify Report:
Scan this QR Code



शोध सार

झारखंड का भू-भाग जंगलों एवं पहाड़ों से घिरा है। यहां पर केवल एक चौथाई भाग जमीन को जोता या बोया जाता है। यह भाग खेती के लिए पर्याप्त न होकर खनिज पदार्थ के लिए प्रसिद्ध है फिर भी झारखंड के निवासियों का कृषि प्रमुख व्यवसाय है। साधारणतया जनसंख्या का बड़ा भू-भाग 70 से 80 प्रतिशत ही अपनी आजीविका के लिए ही मुख्य रूप से कृषि पर आश्रित रहता है। भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि है इसीलिए भारत को कृषि प्रधान देश कहा जाता है जिसके कारण भारत की सर्वाधिक जनता का कृषि से संबंधित होना प्रतीत होता है। भारत की कुल जनसंख्या का 22.92 प्रतिशत तथा कुल श्रमिकों का 85.40 प्रतिशत जनसंख्या कृषि से ही जुड़ी हुई है जबकि झारखंड में समस्त जनसंख्या का 25.15 प्रतिशत एवं पूर्ण श्रमिक का 66.83 प्रतिशत है। यह प्रतिशत देश के औसत से अधिक है जो यह दर्शाता है कि झारखंड भी एक कृषि प्रधान राज्य है।

मुख्य शब्द

वन, कृषि, अर्थव्यवस्था, उत्पादन, आजीविका, भूमि, खूंटकट्टी.

कृषि संसाधन

कृषि कार्य को पूर्ण रूप होने में दो प्रमुख तथ्यों की सहभागिता होता है। कृषि को प्रभावित करने वाले पारिस्थितिकीय तत्व एवं कृषिगत संसाधन है। प्रथम तथ्य अपने गुणों के आधार पर कृषि की उत्पादकता को नियंत्रित करता है जो स्थलीय कारक, जलवायु कारक, मृदीय कारक और जैविक कारक होते हैं। यह सभी कारकों को मिलाकर कृषि का आधार कहा जाता है। दूसरे तत्वों में कृषि कार्य को संपन्न होने में सहयोग करने वाले कारक जिन्हें हम संसाधन कहते हैं। कृषि संसाधन के रूप में प्रमुख तत्वों को शामिल किया जाता है जैसे – जल, सिंचाई, बीज, खाद इत्यादि।

भूमि

बगैर भूमि की कृषि कार्य की कल्पना संभव ही नहीं है। किसी भी राज्य का क्षेत्र के समस्त क्षेत्रफल में से कृषि संपन्न

योग्य कितना भू-भाग है। इसके अंतर्गत विस्तार से अध्ययन किया जाता है। झारखंड का कुल क्षेत्रफल 79714 वर्ग किलोमीटर अर्थात् 7971 400 हेक्टेयर है जिसमें लगभग 23 लाख हेक्टेयर भूमि जंगल के लिए उपयोग हो रहा है। 6 लाख हेक्टेयर भूमि खाली है। पहाड़-पर्वतों के कारण 7 लाख हेक्टेयर भूमि में गैर कृषि कार्य संपन्न हो रहे हैं अर्थात् इस भूमि पर मकान, सड़क, नदी, कारखाना, खान आदि का उपयोग हो रहा है। 2.7 लाख हेक्टेयर भूमि बेकार, परती, चारागाह आदि के लिए है तथा केवल 41 लाख हेक्टेयर भूमि केवल कृषि योग्य है। इस कृषि योग्य भूमि का उपयोग भी कृषि के विभिन्न स्वरूपों में होता है, जैसे झारखंड में समस्त कृषि योग्य भूमि।²

कृषि की विशेषताएँ

झारखंड की कृषि वाली भूमि को दो भागों में बांटा गया है, पहला दोन दूसरा टांड क्षेत्र। निम्न भूमि को दोन कहा गया है। इसका उपयोग धान की खेती के लिए किया जाता है। मृदा की उपजाऊ के अनुसार दोन को तीन से श्रेणियों में रखा गया है। प्रथम दोन, द्वितीय दोन एवं तृतीय दोन। इसमें प्रथम दोन को जल ग्रहण करने की क्षमता तथा उपजाऊ की दृष्टिकोण से सबसे उत्तम माना गया है। कहीं-कहीं वर्ष में धान की दो फसल कि उपज की जाती है। नदी घाटी अथवा नालों के समीप की पट्टी प्रथम दोन से संबंधित होती है। प्रथम दोन एवं तृतीय दोन के माध्यम संकीर्ण पट्टी में दोन द्वितीय का विस्तार पाया जाता है। तृतीय दोन का उपयोग जल्द तैयार होने वाले धन अथवा मोटा धान या गोडा उत्पादन में उपयोग किया जाता है।

इसी प्रकार टांड भूमि को भी तीन भागों में बांटा गया है जो उच्च भूमि में मिलती है। प्रथम टांड, द्वितीय टांड एवं तृतीय टांड वाली भूमि। प्रथम टांड अधिवासीय क्षेत्र के इर्द-गिर्द विस्तृत होता है। जहां कुओं के माध्यम से सिंचाई के द्वारा सघन खेती विशेषकर सब्जियों का उत्पादन किया जाता है जबकि द्वितीय एवं तृतीय कोटि का टांड का उपयोग दलहन, तिलहन अथवा मोटे अनाज के उत्पादन के लिए किया जाता है।³

झारखंड की कृषि की निर्भरता मानसूनी वर्षा पर देखी जा सकती है। यहां सिर्फ 8.7 प्रतिशत कृषि भूमि को ही सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है। अतः यह कहना बिल्कुल गलत नहीं होगा कि झारखंड की कृषि मानसून के साथ जुआ का खेल है। कृषि से संबंधित यांत्रिकों का स्तर भी राज्य में निम्न प्रकार का है। यद्यपि कुछ धनाढ्य कृषिक ट्रैक्टर, विद्युत, पंप-सेट आदि का उपयोग करने लगे हैं। यहां प्रथम टांड वाली भूमि में कुओं से सिंचाई का मुख्य साधन है जबकि अन्य क्षेत्रों में तालाब, पोखरा या अन्य माध्यमों से फसल की सिंचाई की जाती है।⁴

मौसम के अनुसार कृषि

भारत के अनेक कृषि क्षेत्र के समान ही झारखंड के कृषि का मौसम एकरूपता रखती है यह कृषि के नियम में तीन मौसम पाए जाते हैं:

भदई कृषि: प्रथम मानसूनी वर्षा के साथ फसल बोई जाती है, जो सितंबर तथा अक्टूबर में फसलों को काट ली जाती है। इसके अंतर्गत गोडा, धान, मक्का, कोदो, तिल आदि फसल आते हैं।

उगाहनी कृषि: इसके अंतर्गत फसल की बोवाई जून के अंत अथवा जुलाई के प्रारंभ में की जाती है तथा अक्टूबर एवं नवंबर में इस फसल को काट ली जाती है। यह कृषि का सबसे व्यस्त मौसम है। झारखंड में इस समय ग्रामीण इलाकों में बेरोजगारी दिखाई नहीं पड़ती है। दोन में धान तथा टांड में सरगुजा मुख्यतः अगहनी फसले पैदा की जाती है।⁵

रबी फसल: नवंबर-दिसंबर में बोई जाने वाली तथा मार्च-अप्रैल में काट ली जाने वाली फसले रबी फसल कहलाती है। रबी फसलों का महत्व झारखंड में काफी कम है। इस मौसम में मुख्य रूप से दलहन एवं तिलहन उपजाए जाते हैं जबकि हाल के वर्षों में गेहूं तथा चना का विस्तार झारखंड राज्य में रबी फसल के रूप में तेजी से हुआ है।⁶

सिंचाई: झारखंड की स्थिति मानसून क्षेत्र में तथा पठारी क्षेत्र में होने के कारण वर्षा से फसलों को सिंचाई के लिए पर्याप्त जल नहीं मिल पाता है जिसके कारण सिंचाई आवश्यक हो जाती है। ऐसे क्षेत्र में सिंचाई, कृषि के लिए महत्वपूर्ण संसाधन बन जाती है। मनुष्य की बुद्धिमत्ता होने के कारण अनेक साधन सिंचाई के लिए मुहैया कराया गया है— जिसमें कुआं, तालाब, नलकूप नहर, पोखर आदि हैं। पैड़न, आहर, नाला का किनारा आदि झारखंड में सिंचाई के भी साधन बन जाते हैं। राज्य में वर्तमान समय में वृहद परियोजनाओं के अंतर्गत अजय कोनार, स्वर्णरेखा, गुमानी, पुनासी, उत्तरी कोयल, कांची, औरंगा है। मध्य परियोजनाओं के अंतर्गत-बटाने, तोरी, झरझारा, संकरी गली, सोनुआ, सुरु, लतरातु, कंस, भैरवा, केशो, पंचखेटो, रामरेखा, बासुकी आदि हैं।⁷

झारखंड राज्य में वर्तमान स्थिति के अनुसार बृहद परियोजनाओं से 20300 हेक्टेयर की सिंचाई की जा रही है। मध्यम सिंचाई परियोजनाओं से 1.89,580 हेक्टेयर तथा लघु सिंचाई योजनाओं से 235, 563 हेक्टेयर तथा अन्य स्रोतों से 2.14,279 हेक्टेयर भूमि में सिंचाई क्षमता विकसित हुई है अर्थात् कुल 656.300 हेक्टेयर कृषिगत भूमि में सिंचाई की क्षमता विकसित हो चुकी है।⁹

झारखंड में कृषि के प्रकार

खूंटकट्टी: प्राचीन झारखंड में स्थानीय आदिवासी खासकर मुंडा जनजाति यह पहले नहीं जानते थे की जमीन पर व्यक्तिगत रूप से स्वामित्व भी प्राप्त किया जा सकता है। ये जनजाति सामूहिक रूप से जंगलों को साफ करते थे और उस जमीन पर सामूहिक खेती किया करते थे जिसके कारण सभी भूमि या तो एक पूरे परिवार का होता था या उनके पूर्वज परिवार के पुत्रों का होता था। जंगल के भूमि को साफ कर सृजन करना उस परिवार द्वारा किया गया “खूंटकट्टी-हातु” के नाम से जाना जाता था। इसे उस परिवार द्वारा निर्मित गांव भी कहा जाता था।¹⁰

शुरुआत में मुंडारी काश्तकारी प्रथम बहुत सरल थी और ये जनजाति किसी भी प्रशासकीय व्यवस्था से कोसो दूर थी। पूरा मुंडा क्षेत्र परहा और पट्टी में बांटा हुआ था। सभी पट्टी में 10 से 15 गांव होते थे और तीन तरह के भू-स्वामित्व प्रचलित थे जो मुंडा उरांव और हो के के बीच थे। ये भूस्वामित्व क्रमशः खूंटकट्टी, भूइहरि और रैयतवाड़ी के नाम से जाने जाते थे। खूंटकट्टी प्रथा पहली बार भूमि को साफ कर बनाने वाले के साथ जुड़ी हुई थी। खूंटकट्टी गांव में नए लोगों को आकर बसने वालों को वैसा प्रभुत्व नहीं होता था जैसा की पहली बार गांव बरसाने वाले लोगों को या परिवार को या उसकी पीढ़ी को होता था।¹⁰

चूंकि मुंडाओं को खेती-बाड़ी का तो ज्ञान नहीं था लेकिन आर्यों के संपर्क में आने से हुआ, किंतु ये इस कला से झारखंड में बसने के पूर्व ही परिचित हो चुके थे और यही कारण था कि झारखंड में आते ही इन्होंने जंगलों को काटकर साफ किया और अपने लिए गांव एवं खेतों का निर्माण किया जो आगे चलकर ये गाँव “खूंटकट्टी हातू” या खेत खूंटकट्टी कहे गए।¹¹

झूम खेती: झारखंड की जनजातियों की प्राचीन अर्थव्यवस्था उसकी वर्तमान अर्थव्यवस्था से भिन्न थी। उनके अधिकांश आर्थिक प्रयत्न भोजन प्राप्ति हेतु किए जाते थे। उनका यह प्रयास वहां के भौगोलिक की पर्यावरण पर निर्भर करता था जिसके कारण उन्हें कठिन परिश्रम एवं प्रकृति से संघर्ष करना पड़ता था। उत्पादन के लिए अधिकार प्रत्यंन पारिवारिक एवं सामूहिक आधार पर ही किए जाते थे। आदिम समाज में सुनियोजित अर्थव्यवस्था नहीं थी। (आर्थिक दृष्टि से झारखंड की जनजातियों में चार श्रेणियां थी। ये श्रेणी शिकारी और भोजन-संग्रहकर्ता, अस्थायी कृषक, स्थायी कृषक तथा दस्तकार समुदाय थे।¹² सोरिया-पहाड़िया तथा पहाड़ी खड़िया अस्थायी श्रेणी के कृषक थे। उनकी खेती दो तरह की होती थी-पहाड़ की ढलान पर तथा झूम-खेती। सभी परिवार के पास थोड़े बहुत जमीन होती थी। प्राचीन काल में असुर जनजाति भी झूम-खेती करते थे।¹³ पहले जनजातियों का जंगलों पर संपूर्ण अधिकार होता था। वन पर आधारित झूम-खेती- स्थानांतरित कृषि पर निर्भर रहा करते थे। झूम खेती प्रायः जंगलों तथा पहाड़ों पर निवास करने वाले जनजातियां करती थी।¹⁴

स्थानांतरण कृषि: यह एक प्रकार की खेती है जिसमें लोग स्थायी रूप से एक गांव में रहते हैं, लेकिन खेती के लिए प्रत्येक साल जगह बदल-बदल कर करते हैं। खेती का स्थान पहाड़ की घाटी, जंगलों में होता है चूंकि हर साल इस खेती में खेती का जगह बदल जाता है, जिसके कारण इसे स्थानांतरण किसी कहते हैं। इसे स्वीडन कृषि, कालु कृषि, कोरवा कृषि इत्यादि नाम से जाना जाता है। यह पेशा उत्तर-पूर्व जनजातियों के मुख्य पेशा रही है। इसे झूम खेती कहते हैं तथा झूम खेती करने वालों को झूमिया कहा जाता है। इस खेती में जनजातियों का गांव स्थायी होता है लेकिन खेती का जगह हर साल बदलता रहता है। चार व पांच सालों के बाद वे पुनः पहले स्थान पर लौट आते हैं, चूंकि यह खेती पहाड़ की घाटियों में किया जाता है अतः इसमें अनेक प्रक्रियाओं का अपना पड़ता है।¹⁵

धन कटनी: वैसे शिबू सोरेन ने तो गोला, पेटवार, बोकारो, धनबाद के साथ-साथ और इलाकों में भी आदिवासियों की हथियाई गई जमीन को महाजनों से मुक्त करने का अभियान चलाया था लेकिन यह आंदोलन सबसे ज्यादा सफल हुआ तो वह टुंडी का क्षेत्र था और ऐसा इसलिए हो पाया कि वहां योजनाबद्ध तरीके से शिबू सोरेन में आंदोलन को चलाया था।¹⁶ देश के विभिन्न क्षेत्रों से बुद्धिजीवी, पत्रकार और शोध करने वाले भी समय-समय पर टुंडी आकर धान काटो अभियान के साथ-साथ वहां चल रही गतिविधियों को समझते थे। एक सामाजिक कार्यकर्ता, लेखक और बाद में जेएनयू के प्रोफेसर बने वीर भारत तलवार ने सन 1975 में शिबू सोरेन के आश्रम में कुछ दिन बिताया था। उन्होंने अपने डायरी में नोट भी किया था कि शिबू सोरेन के पास कैसे-कैसे मामले आ रहे हैं, जो बाद में यह एक प्रमाणिक दस्तावेज हो गया।

1 अगस्त 1975 को शिबू सोरेन पोखरिया आश्रम में थे, तब उनके पास मछुआरा गांव के चार मुस्लिम हाकिम मियां, सिराम मियां, हाड़ी मियां और राजू मियां आए थे। यह लोग शिबू सोरेन से हाथ जोड़कर विनती कर रहे थे कि हमें कुछ जमीन पर खेती करने की इजाजत दी जाए क्योंकि आदिवासियों ने उनकी जमीन पर कब्जा कर लिया था। वास्तव में उनके पूर्वज बाहर से आए थे और गांव के प्रधान से मिलकर वहां पर बस गए एवं धीरे-धीरे आदिवासियों की भूमि पर कब्जा कर लिया या धोखे से अपने नाम करवा लिया था। ये लोग आदिवासियों के जमीन को कब्जा करते गए। अपने ही खेतों में आदिवासियों को हटाना पड़ा था। जब धान काटो अभियान चलातो आदिवासियों ने उनके खेत से जबरदस्ती फसल काट ली थी। कभी आदिवासियों की जमीन पर महाजनों-जमींदारों का कब्जा हुआ करता था और अब आदिवासियों ने अपनी जमीन वापस ले रही थी।¹⁷ कुछ मामले में तो आदिवासियों ने दूसरों को रोपनी की इजाजत तक दी थी तो कुछ में नहीं। यह घटना इस बात को भी प्रमाणित करती है की "धान काटो" आंदोलन ने कैसे स्थिति को बदल दी थी। जो आदिवासी वर्षों से अपनी जमीन पर कब्जे के लिए तरस रहे थे उन्हें अपनी जमीन वापस मिल गई थी।¹⁸

कृषिगत समस्या: कृषिगत झारखंड में अनेक समस्याएं हैं। 2001 की गणना के अनुसार राज्य में कुल मजदूरों में से 68 प्रतिशत लोग खेती कार्य से जुड़े हुए हैं अर्थात् झारखंड की यही प्रमुख व्यवसाय है लेकिन अनेक समस्याओं के कारण यह आधृत है। इन समस्याओं की काफी लंबी सूची है किंतु प्रमुख समस्याओं में मिट्टी-अपरदन, मिट्टी की अम्लीयता, सिंचाई की कमी, परती भूमि, उर्वरता, निर्भरता एवं साहुकारी है। इन समस्याओं में प्रमुखतः छोटे तथा बिखरे हुए खेत निम्न-उत्पादकता, सिंचाई की समुचित व्यवस्था की कमी, कृषि की पुरानी पद्धति, कीटनाशक एवं रासायनिक उर्वरकों एवं खादों की कमी महत्वपूर्ण है।¹⁹

कृषि क्षेत्र में मानव संसाधन की स्थिति: कृषि उत्पादन से संबंधित संसाधनों जैसे भूमि, जल, जंगल, पशुधन, पेड़-पौधों आदि के प्रबंधन करने की जिम्मेवारी मानव संसाधन की होती है। अतः कृषि से जुड़े मानव संसाधन की चर्चा करना यहां अति आवश्यक हो जाता है। झारखंड राज्य की समस्त आबादी 2 करोड़ 69 लाख है जिसमें से 2 करोड़ 9 लाख लोग अभी भी गांव में रहते हैं तथा कृषि एवं उद्योगों पर अपना जीवन यापन करने के लिए मजबूर है। राज्य के कुल घरेलू उत्पादन में कृषि का लगभग 25 प्रतिशत योगदान रहता है जो साधनों के लगभग 70 प्रतिशत तथा जनजातियों के लगभग 92 प्रतिशत परिवारों की जीविका का आधार है जो लगभग कुल आबादी की एक-तिहाई जनजातियों की संख्या है। यह 30 विभिन्न समुदायों में बटी हुई है तथा कृषि के तौर-तरीकों को जीवन यापन के अन्य धंधों, रीति-रिवाजों, भाषा एवं परंपराओं के मामले में एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न है।²⁰

कृषि योग्य बेकार भूमि: झारखंड में समुचित कृषि योग्य खेतों के 69.2 प्रतिशत अर्थात् 1 हेक्टेयर से कम क्षेत्रफल वाले हैं और 0.7 प्रतिशत अर्थात् 10 हेक्टेयर से अधिक वाले कृषिगत भूमि है। छोटे आकार की कृषि पूंजी निवेश, सिंचाई तथा कृषि यंत्रों के प्रयोग आदि उपयुक्त नहीं है जिसके कारण झारखंड के कृषि उत्पादन में कमी आ जाती है।

मिट्टी: झारखंड के अधिकांश भू भागों में लाल बालू अथवा लेटराइट मिट्टियां पाई जाती है यहां की मिट्टी की उर्वरता निम्न होती है जिससे राज्य में कृषि उत्पादकता में कमी आ जाती है।²¹

आधुनिक औजारों का अल्प प्रयोग

झारखंड की कृषि के लिए किसानों का यंत्रीकरण में पिछड़ापन होना भी एक समस्या है, जैसे:

1. ट्रैक्टरों तथा मशीनों की कीमत अधिक होना।
2. किसानों को पूंजी की कमी।
3. बैंक ऋण लेने में किसानों की झिझक और बैंक अधिकारियों में असहयोग की भावना तथा प्रक्रिया को जटिल बना देना।
4. किसानों को मशीन संबंधित ज्ञान की कमी।
5. मजदूर और बैलों की अधिकता।
6. जमीनों का सीढ़ीदार होना तथा प्लॉटों को छोटा-छोटा होना।²²

निष्कर्ष

झारखंड में 95 प्रतिशत गांव की अर्थव्यवस्था पूरी तरह से जंगलों पर टिकी है। सिंचाई भी मानसूनी बारिश पर निर्भर है जिसके कारण झारखंडी किसान पूरे साल में केवल एक बार में एक से अधिक फसल नहीं उगा पाते हैं जिनके कारण झारखंड के ग्रामीणों को हर साल मौसमी बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है।

पिछड़ेपन की स्थिति: कम उपज और स्थिर वृद्धि दर झारखंड क्षेत्र की कृषि की मुख्य विशेषताएं हैं। इस क्षेत्र की एकमात्र सबसे बड़ी फसल धान है जिसकी खेती लगभग 61 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि पर की जाती है तथा दूसरी फसलें जो हैं उनका नाम मक्का, गुड़ और गेहूँ है। इन फसलों को कुल कृषि क्षेत्र के कम से 6.4 प्रतिशत, 2.4 प्रतिशत और 2.7 प्रतिशत क्षेत्र में उगाया जाता है। यहां समस्त उपजाऊ क्षेत्र में लगभग 7 प्रतिशत भाग में दालें उपजाई जाती हैं। विभिन्न राज्यों एवं राष्ट्रीय उपज के औसतों की अपेक्षा झारखंड में लगभग सभी फसलें उगाई जाती हैं जिनकी मात्रा काफी कम है। गेहूँ भी इस क्षेत्र की प्रमुख फसल है लेकिन इसकी वृद्धि दर भी मात्र एक प्रतिशत है जबकि राष्ट्रीय औसत 2.8 प्रतिशत है।²³

पिछड़ी के कारण: वर्तमान लाभ जैसे संकर बीज, सिंचाई, उर्वरक, कीटनाशक रसायन और कृषि उपकरणों के मामले में झारखंड में बहुत नाम मात्र की तरक्की हुई है जिसके कारण फसल उत्पादन का दर लगातार काम हो रहा है जबकि हमारे देश में बहुत से क्षेत्रों में इन उपायों का प्रयोग अधिक है। वर्ष 1994-95 में झारखंड में केवल 12.3 प्रतिशत उन्नत प्रजाति के धान बोए गए हैं जबकि यह औसत राज्य में मात्र 35.6 प्रतिशत तथा राष्ट्रीय स्तर पर 74.6 प्रतिशत का दौर रहा है। आधुनिक कृषि यंत्र और मशीनों जैसे ट्रैक्टर, थ्रेसर, पंपसेट, ट्यूबवेल आदि का प्रयोग 60 के दशक में भारतीय कृषि में बहुत अधिक बढ़ा है। इसके बावजूद झारखंड के किसानों को पारंपरिक कृषि औजारों और विधियों का ही प्रयोग करना पड़ रहा है। यहां तक की खेतों की जुताई पशुओं के द्वारा आज भी की जा रही है। खेतों में मिट्टी के ढेलों को फोड़ने के लिए लकड़ी का सहारा लिया जाता है जिसके दूसरे सिरे पर 5 से 6 किलो का वजन रहता है।²⁴

समाधान

आदिवासी क्षेत्रों में छोटे-छोटे जमीन होने, टुकड़ों में विभक्त होने, मिट्टी की गुणवत्ता में कमी होने, तथा खेती की प्रारंभिक प्रक्रिया के कारण कृषि उत्पादन प्रभावित होती है। इसके लिए आदिवासियों को कृषि में सुधार के लिए समेकित कृषि की उन्ही सिद्धांतों को अपनाने की जरूरत है जो देश के अन्य भागों में अपनाई गई है। आदिवासी क्षेत्रों में खेती परिवर्तन का एक मुख्य समस्या यह भी है कि हर कोई यह पूरी तरह से स्वीकार करता है कि परिवर्तित खेती आदर्श तरीका नहीं है। उस प्रक्रिया को पूरी तरह से बदलने में काफी लंबा समय लगेगा चूंकि इस समस्या का आकर्षक समाधान यह भी है कि परिवर्तित खेती को मेढ़वाली खेती में परिवर्तित कर दिया जाए। जहां पहाड़ों के ढलानों को लेकर समस्या नहीं हो रही है और मिट्टी की गहराई पर्याप्त है वहां सुधार की अति उत्तम संभावना है।²⁵

संदर्भ सूची

1. वीरोत्तम, वी. (2017) *झारखण्ड, इतिहास एवं संस्कृति*, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, पृ. 05।
2. तिवारी, राम कुमार (2016) *झारखंड की रूपरेखा*, शिवांगन पब्लिकेशन, रांची, पृ. 349।
3. कुमार, श्याम (2004) *झारखंड एक विस्तृत अध्ययन*, सफल प्रकाशन, रांची, पृ. 256।
4. तिवारी, राम कुमार (2023) *झारखंड का भूगोल*, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, पृ. 273।
5. कुमार, श्याम (2004) *झारखंड एक विस्तृत अध्ययन*, सफल प्रकाशन, रांची, पृ. 259।
6. कुमार, श्याम (2004) *झारखंड एक विस्तृत अध्ययन*, सफल प्रकाशन, रांची, पृ. 259।
7. कुमार, श्याम (2004) *झारखंड एक विस्तृत अध्ययन*, सफल प्रकाशन, रांची, पृ. 350।
8. तिवारी, राम कुमार (2023) *झारखंड का भूगोल*, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, पृ. 223-24।
9. कुमार, विनोद (2005) *आदिवासी संघर्षगाथा*, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, पृ. 15।
10. तिवारी, राम कुमार (2016) *झारखंड की रूपरेखा*, शिवांगन पब्लिकेशन, रांची, पृ. 480-81।
11. तिवारी, राम कुमार (2016) *झारखंड का भूगोल*, शिवांगन पब्लिकेशन, रांची, पृ. 508।
12. वीरोत्तम, वी. (2017) *झारखण्ड, इतिहास एवं संस्कृति*, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृ. 613।
13. वही, पृ. 614।
14. केरकेट्टा, सुनील (2016) *झारखंड के आदिम जनजीवन*, के. के. पब्लिकेशन, इलाहाबाद, पृ. 37।

15. पाण्डेय, गया (2025) *झारखंड की जनजातियाँ एवं उनकी संस्कृति*, क्राउन पब्लिकेशन रांची, झारखंड, पृ. 137।
16. कुमार, प्रकाश (2017) *झारखंड एक परिचय*, एम सी ग्राव हिल एजुकेशन, चेन्नई, पृ. 182–83।
17. सिन्हा, अनुज कुमार (2020) *दिसोम गुरु शिबू सोरेन*, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 59।
18. वही पृ. 65।
19. तिवारी, राम कुमार (2016) *झारखंड का भूगोल*, शिवांगन पब्लिकेशन, रांची, पृ. 265।
20. रणेंद्र, सुधीर पाल (2019) *झारखंड एनसाइक्लोपीडिया*, वीर गुरु के आसपास खंड 2, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ. 161।
21. कुमार, श्याम (2004) *झारखंड एक विस्तृत अध्ययन*, सफल प्रकाशन, रांची, पृ. 260।
22. तिवारी, राम कुमार (2016) *झारखंड की रूपरेखा*, शिवांगन पब्लिकेशन, रांची, पृ. 371।
23. रूपक, (2012) *जागो मंदार बाजा*, आई डी पब्लिसिंग, रांची, पृ. 81–82।
24. रणेंद्र, सुधीर पाल (2019) *झारखंड एनसाइक्लोपीडिया*, वीर गुरु के आसपास खंड 2, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ. 173।
25. तिकी, प्रभाकर (2022) *झारखंड आदिवासी विकास का सच*, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली, पृ. 79–80।
